गुरु एक ऐसा मार्गदर्शक है जो केवल और केवल शिष्य का उत्थान चाहता है। वह पूर्णतया निःस्वार्थ होता है। गुरु और शिष्य का सम्बन्ध अनेक जन्मों तक बना रहता है। एक सुयोग्य शिष्य को गुरु स्वयं ही आकर दीक्षा दे देते हैं।

<u>परम गुरु स्वामी शिवानंद</u>
<u>के चरण कमलों में सप्रेम भेंट।</u>

ज्ञानदर्शन योगाश्रम, सड़क–9, सेक्टर–10,
भिलाई (छ.ग.) में आयोजित शिवानन्द जयन्ती के
उपलक्ष्य में प्रकाशित (08.09.2008)

योग का दिव्य उपहार है गुरु कृपा।
योग का दिव्य उपहार है ईश कृपा।।
योग का दिव्य उपहार है उत्तम स्वास्थ्य।
योग का दिव्य उपहार है उत्तम आत्मविश्वास।।
विश्वास जो पहाड़ों से भी टकरा जाए।
विश्वास जो पर्वतों को भी लाँघ जाए।।
विश्वास जो तन मन को कर दे
एक नूतन ऊर्जा से ओत प्रोत ।
विश्वास जो तन मन को कर दे
एक दिव्य प्रेम से ओत प्रोत ।
योग का संदेश जन जन तक फैलाना है।
विश्वबंधुत्व का सपना सच करके दिखाना है।
इसी धरा पर स्वर्ग है।
प्रत्येक मानव को अनुभव कराना है।।

हम सब के अन्दर एक सद्गुरु विद्यमान है। चिन्ता, तनाव, और क्रोध के साये में जीते–जीते हम अपने अन्दर के उस गुरु से जुड़ने की कला को भूल बैठे हैं। बाह्य गुरु हम सबकी मदद तभी तक करता है, जब तक हम अपने अन्दर के गुरु से मार्गदर्शन लेने में समर्थ नहीं होते। जागो ! उठो! अपने अन्दर के गुरु से जुड़ने की कला को सीखो और जीते जी मुक्ति का अनुभव करो।

सहकारी मुद्रणालय एवं प्रकाशन संस्थान मर्यादित
सेक्टर 10, भिलाई से मुद्रित।

गुरु एक तत्व

प्रीति अग्रवाल

विषय सूची

क्र.	शीर्षक	पृष्ठ क्र.
1.	तीन भारतीय गुरुओं को सितारों के नाम	01
2.	हमारे गुरु	02
3.	आधार	03
4.	एक उद्‌गार अपने गुरु के श्री चरणों में	05
5.	परमगुरु श्री स्वामी शिवानंद सरस्वती– शिवजी के अवतार	12
6.	परमहंस श्री स्वामी सत्यानंद सरस्वती – एक विराट व्यक्तित्व	18
7.	परमहंस स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती – एक दिव्य व्यक्तित्व	24
8.	परमहंस स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती – एक प्रभाव शाली व्यक्तित्व	27
9.	गुरु	32
10.	गुरु आज्ञा ही केवलम्	34
11.	शिष्य की पात्रता – गुरुकृपा	36
12.	एक शिष्य के नाम पत्र	39
13.	गुरु कृपा	43
14.	गुरु कृपा की अजस्त्र धारा	45
15.	गुरु भक्ति	47
16.	गुरु की महिमा	50
17.	गुरु पूर्णिमा संदेश	51
18.	दुःख और दुष्टों को मेरा प्रणाम	54
19.	एक अहसास	56
20.	मेरी प्रार्थना	59
21.	अपने गुरु के श्री चरणों में एक श्रद्धांजलि	61
22.	एक भाव	63
23.	मेरे गुरु का सपना	65

प्रस्तावना

अनेक शास्त्रों में गुरु पूर्णिमा को अत्यधिक महत्वपूर्ण बताया गया है। गुरु पूर्णिमा को व्यास पूर्णिमा भी कहा जाता है। इस दिन गुरु की अपने समस्त शिष्यों पर अतिशय कृपा बरसती है। शिष्य चाहे गुरु के समीप हो अथवा दूर, गुरु के श्री चरणों में शिष्य का समर्पण ही उसे गुरु कृपा का अधिकारी बनाता है। एक सद्‌गुरु अपने सब शिष्यों के मन को जानता है। अतः बाहरी व्यक्तित्व पर उसकी कृपा निर्धारित कदापि नहीं होती।

इस पुस्तिका को लिखने का एक मात्र उद्देश्य है कि प्रत्येक शिष्य यह समझे कि उसके अन्दर की सच्चाई और निर्मलता ही उसकी ग्राह्य शक्ति को बढ़ा सकती है। **"गुरु आज्ञा ही केवलम्"** एक ऐसा महा वाक्य है जो शिष्य का महा मंत्र होना चाहिये। **"गुरु आज्ञा का पालन गुरु को माला पहनाने अथवा उपहार देने से भी अधिक महत्वपूर्ण है।"** – **परम गुरु स्वामी शिवानंद**

प्रीति अग्रवाल

तीन भारतीय गुरुओं को सितारों के नाम

18 जुलाई 2008, गुरु पूर्णिमा का आज का दिन भारतीय संस्कृति के आकाश में एक नया अध्याय लेकर आया, जब अमरीका की एक प्रतिष्ठित संस्था एस्ट्रोनामिकल सोसायटी ऑफ अमेरिका ने भारत के तीन आध्यात्मिक गुरुओं को तारा मंडल के तीन सदस्यों के नाम देने का निर्णय लिया है।

ध्रुव तारे के बाद यह पहला मौका है, जब अमरीकी संस्था ने तीन भारतीय गुरुओं को तारों के नाम दिए हैं, इनमें स्वामी शिवानंद सरस्वती को कन्या तारामंडल, स्वामी सत्यानंद सरस्वती को मकर तारामंडल एवं स्वामी निरंजनानंद सरस्वती को कुंभ तारामंडल के एक सदस्य का नाम दिया गया है। इस तरह अब भारत के तीन गुरु विश्व के तारामंडल में दैदीप्यमान हो गए हैं। विदेशी लोगों के नाम पर तो कई तारे पहले से हैं, लेकिन यह पहला मौका है, जब भारत के तीन आध्यात्मिक गुरु एक साथ आकाश में चमकेंगे, इसकी सूचना आज ही इंदौर में प्राप्त हुई।

नव भारत इन्दौर से उद्‌धृत

हमारे गुरु

आसमां के सितारे, खुदा ने उतारे जमीं पे
इस जहाँ के या उस जहाँ के, वो गुरु हैं हमारे
प्यार, स्नेह के बंधन से हैं वे बँधते।
शिष्यों के पल–पल का हिसाब हैं वो रखते।
शिष्यों की हर मुश्किल को हल हैं वो करते।
कभी डाँटते, कभी दुलारते, शिष्यों की आध्यात्मिक प्रगति का पथ प्रशस्त हैं वो करते।
स्नेह के हैं वो सागर। दया के हैं वो सागर।।
कोई डूबे तो जाने। कोई आज्ञा माने तो समझे।।
एक–एक शब्द है उनका ज्ञान से पगा।
एक–एक शब्द है उनका विवेक से पगा।
शिष्य की ग्राह्य क्षमता हो, तो वो जाने।
उनको न कोई मोह। उनको न कोई माया।।
विश्व कल्याण के लिए ही हैं वो जन्मे।
बहुजन हिताय बहुजन सुखाय के लिए ही हैं वो जन्मे।।

जो भी उनकी शरण में आता, थोड़ा सा भी विश्वास करता,
अपने स्व का थोड़ा भी समर्पण करता।
वो ही उनकी कृपा से माला माल हो जाता।।
विश्वास न हो तो आज़मा के देख लो।
अपने अनुभव से ही मेरे कथन की सत्यता को परख लो।
हाथ कंगन को आरसी क्या। पढ़े लिखे को फारसी क्या।।
आज अंग्रेज भी उनका लोहा मान रहे ।
और भारतीय तो अंग्रेजों के पीछे ही दौड़ रहे।।

आधार

मेरे तो आधार शिवानन्द के चरण।
शिवानन्द के चरण, सत्यानन्द के चरण।
सत्यानन्द के चरण, निरंजनानन्द के चरण।।
मेरे तो आधार शिवानन्द के वचन।
शिवानन्द के वचन, सत्यानन्द के वचन।
सत्यानन्द के वचन, निरंजनानन्द के वचन।।

मेरे तो आधार शिवानन्द के करम।
शिवानन्द के करम, सत्यानन्द के करम।
सत्यानन्द के करम, निरंजनानन्द के करम।।
मेरे तो आधार महापुरुषों के वचन।
महापुरुषों के वचन, वेदों के वचन।
वेदों के वचन, भगवद्गीता के वचन।।
मेरे तो आधार श्री गुरुदेव के वचन।
श्री गुरुदेव के वचन, श्री कृष्ण के वचन।
श्री कृष्ण के वचन, श्री राम के वचन।।
मेरे तो आधार सीता राम के चरण।
सीता राम के चरण, राधेश्याम के चरण।।
मेरे तो आधार भारतमाता के चरण।
भारतमाता के चरण, श्री गुरुदेव के चरण।।
गुरु भक्ति मेरा आधार। गुरु कृपा मेरा कगार।।
गुरु ही मेरी नैया। गुरु ही मेरा खिवैया।।
गुरु ही मिलाएगा मुझे ईश्वर से।

गुरु ही दिखाएगा मुझे ईश्वर को।।
गुरु ही मेरा पालन हार। गुरु ही मेरा सृजन हार।।
मेरे गुरु पर मैं बलिहारी। अपने गुरु पर मैं जाऊँ वारी।।
ऐसा निःस्वार्थ प्रेम कहाँ मिलेगा? ऐसा रक्षक कहाँ मिलेगा?
मेरे अवगुणों को जाए भूल। मेरे गुणों को दे वो तूल।।
जग में नाम मेरा हो रहा है।
पर मैं जानती हूँ ये काम गुरु कर रहा है।।
कहाँ से पाऊँगी ऐसा निःस्वार्थ निश्छल प्रेम?

एक उद्गार, अपने गुरु के श्री चरणों में

मैं तो धूल का एक कण थी, वहीं खो जाती।
गर गुरु की नजर मुझ पर न पड़ती।।
मैं तो पैरों तले रौंदी जाती।
गर गुरु की नजर मुझ पर न पड़ती।।
मैं तो गुमनामी के अंधेरों में ही खो जाती ।
गर गुरु की नजर मुझ पर न पड़ती।।
मैं तो हूँ अवगुणों से भरी आज भी, कहीं डूब जाती।

गर गुरु की नजर मुझ पर न पड़ती ।।
मैं तो हूँ संसार में उलझी, वहीं रह जाती ।
गर गुरु की नजर मुझ पर न पड़ती ।।
मैं तो हूँ बेहद कमजोर, वैसे ही रह जाती ।
गर गुरु की नजर मुझ पर न पड़ती ।।
मेरे में कोई विशेषता नहीं, मेरे में कोई गुण नहीं ।
ये तो गुरु की असीम कृपा है कि उसने मुझे चुना ।
मेरी प्रतिमा तो जगह–जगह से टूटी फूटी ।
ये तो गुरु की असीम कृपा है कि उसने मुझे तराशा ।
आसक्ति और अहंकार से मैं भरी थी ।
ये तो गुरु की असीम कृपा है कि उसने मुझे खाली किया ।
मैं तो काम, क्रोध, लोभ और मोह में फँसी थी ।
ये तो गुरु की कृपा है उसने मुझे जाल से निकाला ।।
और निकली भी कहाँ थी ।
कि गुरु ने श्रद्धा और विश्वास का अमूल्य धन मुझ पर लुटा दिया ।
उस धन ने मुझे किया माला माल ।

मैं धीरे–धीरे तोड़ पा रही हूँ ये माया जाल ।
गुरु कृपा से ही छूट रहे हैं सब जंजाल ।।
कभी सोचती हूँ, गुनती हूँ ! मनन, चिन्तन करती हूँ ।
मैं तो किसी काबिल नहीं थी ।
वो पारस हैं उन्होंने मुझे सोना बना दिया ।।
नहीं नहीं पारस तो छूने से, लोहे को सोना बनाता है ।
वो तो पारस से भी अधिक शक्ति शाली हैं जिनकी एक दृष्टि ने मुझे हीरा बना दिया ।।
कहाँ पड़ी थी कोयले की खान में । काली कलूटी मैली कुचैली ।
रोगों से टूटी फूटी, किसी के काम की न धाम की ।
गुरु कृपा ने मुझे सूरमा बना दिया ।।
क्या बखान करूँ उनकी महिमा का । क्या बखान करूँ उनकी कृपा का ।।
मेरा रोम–रोम उनका कर्जदार । मेरा ये जीवन उनकी धरोहर ।।
मेरा सर्वस्व है उनके श्री चरणों में समर्पित ।
पर मेरा सर्वस्व है ही क्या, जो मैं समर्पित करूँ ।

मैं कौन हूँ ? मैं खुद को नहीं जानती ।
मैं कहाँ से आई ? मैं खुद नहीं जानती ।।
मुझे कहाँ जाना है ? मैं खुद नहीं जानती ।।
गुरु चरणों में है मेरा आसरा । गुरु चरणों में है मेरा आगार ।।
ईश्वर से यही एक प्रार्थना है कि, वो मेरी श्रद्धा और विश्वास को पक्का करे, मजबूत बनाए ।
ईश्वर आए या न आए, गुरु तो आ जाए ।।
ईश्वर तो मेरे शुद्ध होने का इन्तजार करता है ।
गुरु तो मेरे को शुद्ध करने का काम करता है ।।
अब आप ही बताओ, मैं किसको चाहूँ ?
अब आप ही बताओ, मैं किसको बुलाऊँ ।।
गुरु ही मेरा कर्णधार । गुरु ही मेरा साझेदार ।।
गुरु कृपा में डूबते उतरते ही होगी मेरी नैया पार ।
ऐसे गुरु के श्री चरणों में मेरा शत् शत् प्रणाम ।।
आज कलियुग में वो हैं अवतार ।
ऐसा मैं मानती हूँ, ऐसा मैं जानती हूँ ।।
जीवन उनका समर्पित है अपने गुरु के वाक्यों में

गुरु शिक्षाओं का ही वो कर रहे प्रचार ।
गुरु शिक्षाओं का ही वो कर रहे व्यवहार ।।
गरीबों, वृद्धों के हैं वो मसीहा । इस कलियुग में हैं वो ईसा ।।
पूर्ण धर्म निरपेक्षता उनका नारा है । विश्व बंधुत्व ही उनका नारा है ।
बहुजन हितायः बहुजन सुखायः ही उनका नारा है ।।
गाँवों को वो चमका रहे ।
लड़कियों को शिक्षा के द्वारा स्वावलम्बी बना रहे ।
लड़कियों को ऊपर उठा रहे ।
मेरे जैसे अनेकों को राह दिखा रहे ।।
जग में जीना है तो स्वाभिमान से । जग में जीना है तो सम्मान से ।।
जग में जीना है तो निष्काम भाव से । जग में जीना है तो पूरी शान से ।।
भोगों में रहते हुए, विषयों से बचते हुए ।
सेवा, प्यार और दान करते हुए ।
प्रत्येक प्राणी में ईश्वर को देखते हुए ।।

गरीब अमीर सबका सम्मान करते हुए।
विश्व बन्धुत्व का दिव्य सन्देश फैलाते हुए ।।
अपनी गरिमा से सबको महकाते हुए।
अपने जीवन से अनेकों को प्रेरित करते हुए।
इस धरा पर ही स्वर्ग बनाते हुए।।
जो कुछ अपने पास है, उसको दूसरों के साथ बाँटते हुए।
स्वयं में उस ईश्वर के गुण झलकाते हुए।।
तभी तो होगा ये जीवन सार्थक। अन्यथा होगा ये जन्म निरर्थक।।
दया, करुणा, मेरा सहज स्वभाव हो। मेरे अन्दर में भरा आत्म भाव हो।।
जन जन का कल्याण मैं कर सकूँ। दूसरों के पाँव के काँटे मैं निकाल सकूँ।।
हे गुरु इतनी शक्ति मुझे देना कि तुम्हारी तरह न सही,
पर तुम्हारे चरणों की धूल मैं पा सकूँ।
उस धूल को अपने मस्तक पर लगा के,

तुम्हारे एक गुण को मैं व्यवहार में ला सकूँ।।
तुम्हारी तरह बनने का है मेरा सपना।
सर्व जगत को ही मैं समझूँ घर अपना।।
दोनों हाथों से शान्ति की दौलत को लुटाऊँ।
दोनों हाथों से तुम्हारा सन्देश जन–जन तक पहुचाऊँ।।
सब लोग हों सुखी। इस जगह में कोई न हो दुःखी।।
मेरी तरह इस अमृत को सब चखें। और तुम्हारी कृपा में ही डूबें उतरें।।
सुख के इस सागर में, कृपा के इस आगार में,
हो हर मानव मदमस्त, अलमस्त, बेहाल यही है मेरा सपना।
हर मानव को हो दर्शन उसका अपना।।
अपना दिव्य रूप वो पहचान सके। वो कौन है ये वो जान सके।।
अपनी राह पर चलते–चलते, अपनी अन्तिम मंजिल चुन सके।
राह की बाधाओं से न घबराते हुए। गुरु की उँगली पकड़े हुए।।
उस प्रकाश को पा सके, जो उसकी अन्तिम परिणति है।
जो उसकी अन्तिम गति है।।

परमगुरु स्वामी शिवानंद सरस्वती– शिवजी के अवतार

परमहंस स्वामी निरंजनानंद सरस्वती ने एक प्रवचन में कहा कि परमगुरु स्वामी शिवानंद सरस्वती शिवजी के अवतार थे। यद्यपि स्वामी शिवानंद के चरित्र ने मुझे अन्तर्तम तक अभिभूत किया, उनकी सरल शिक्षाओं को मैं सहज ही आत्मसात करते हुए अपने जीवन में सत्य होते हुए देख रही हूँ, तथापि उनको मैंने भगवान कभी भी नहीं सोचा या समझा था। स्वामी निरंजन के इस कथन का मनन, चिन्तन करते–करते, स्वामी शिवानंद के चरित्र के कुछ ऐसे अंश मैं यहाँ लिखने जा रही हूँ जो साधारण से एकदम हट कर हैं।

योगविद्या में मैंने पढ़ा कि स्वामी शिवानंद निकृष्ट से निकृष्ट कीड़े को भी बचाने के लिए सदैव उद्यत रहते थे। उनके ऋषिकेश आश्रम में चूहों की संख्या बहुत बढ़ गई थी। कुछ

संन्यासी चूहे मारने की दवा का प्रयोग करना चाहते थे। स्वामी जी को (डायबिटिज) मधुमेह की शिकायत थी और वो चूहे कई बार स्वामी जी की उँगलियाँ भी लहू लुहान कर देते थे। परन्तु स्वामी जी उनको बड़े प्यार से अपने बिस्तर से उठा कर बाहर रख आते थे। इतनी करुणा!

आश्रम में उनके कमरे के बाहर एक घड़े में पीने का पानी रखा रहता था। एक बार एक बन्दर उससे पानी पीने लगा। जब एक संन्यासी उसको मारने दौड़ा तो स्वामी जी ने कहा, "नहीं–नहीं उसको पानी पीने दो।" वह कहते थे कि इन्सान की असली पहचान उसकी इन जीवों पर दया करने से होती है। कोढ़ियों को उठाकर आश्रम में लाना और नारायण भाव से उनकी सेवा करना उनको बहुत प्रिय था। उन्होंने ऋषिकेश में एक कुष्ठ आश्रम की स्थापना भी की। उनका कहना था कि यदि व्यक्ति केवल 1 सप्ताह किसी रोगी को नारायण मान कर भाव से सेवा करता है तो उसे 1 साल रोज गंगा जी की पूजा अर्चना करने के

बराबर फल मिलता है। आज अधिकतर लोग पूजा में तो हजारों रुपये खर्च करने को तैयार रहते हैं, परन्तु किसी वृद्ध या रोगी की भाव से सेवा या मदद नहीं कर पाते हैं।

गोविन्द नामक एक व्यक्ति जिसने उनकी हत्या का असफल प्रयास किया, उसको स्वामी जी ने, न केवल पुलिस हिरासत से छुड़वाया अपितु साष्टांग प्रणाम भी किया। अपने आश्रम में कुछ दिन उसे एक सुरक्षित कमरे (कुछ शिष्य उसकी पिटाई करना चाहते थे) में रखा और उसको दीक्षा भी दी। एक संन्यासी के साथ उसको घर भी भेजा। अब ऐसे संत को अवतार न कहा जाए तो और क्या कहें।

प्रत्येक जीव में ईश्वर का अंश है, हम सब पढ़ते तो हैं, जानते भी हैं, परन्तु व्यवहार में कहाँ ला पाते हैं? उनकी इस शिक्षा का मैंने खूब मनन, चिन्तन किया। पिछले वर्ष जब बन्दर हमारे घर के आम के पेड़ों से आम खाने लगे, तो मैंने सोचा कि हनुमान जी ही इस रूप में भोग लगा रहे हैं। यह विचार मन में आते ही, मन

एकदम शान्त हो गया। कुछ समय पश्चात् वह बन्दर स्वतः ही चले गए। और उस वर्ष न केवल मेरे परिवार ने अपितु पूरे आस पड़ोस के गरीबों ने उन वृक्षों के फल खूब खाए।

पहले मुझे छिपकली, मेढक, साँप इत्यादि को देखकर भी कुछ अजीब सा, घृणित सा लगता था। परन्तु अब इस शिक्षा को अपनाते हुए, मुझे उन पर भी सहज दया आने लगी है और अपने इस परिवर्तन से मुझे बहुत अच्छा लग रहा है।

आश्रम के आस–पास जितने भी गरीब दुकानदार या ठेले वाले थे, स्वामी जी सबका खूब सारा सामान खरीद लेते थे, उनकी मदद करने के लिए। गरीब बच्चों से सारे फूल खरीद कर, तुरन्त भगवान को चढ़ा देते थे। यात्रा में अथवा सैर के समय वृद्धों और रोगियों के लिए अपनी जेब में हमेशा कुछ चिल्हर रखते और उन्हें बाँटते जाते थे। आश्रम में कुछ भी दान आने से, उसे तुरन्त जरूरत मंदो में बाँट देते थे।

पुस्तकें बाँटना उनको बहुत प्रिय था। उसको वह

ज्ञान यज्ञ कहते थे। आश्रम में पैसे की कमी होने पर, शिष्यों के नाराज होने पर भी वह आध्यात्मिक ज्ञान की पुस्तकें बाँटते रहते थे। गीता में भगवान श्री कृष्ण ने भी ज्ञान यज्ञ को सर्वश्रेष्ठ यज्ञ बताया है। उन्होंने पूरे विश्व को दिव्य जीवन जीने का सरल परन्तु महत्वपूर्ण संदेश दिया। एक ऐसा जीवन जिसमें प्रत्येक मानव अपने दिव्य स्वरूप को जान सके, अपने अन्दर के ईश्वर को पहचान सके और अनन्त सुख और शांति की उस संपदा को प्राप्त कर सके, जिस पर उसका सहज ही अधिकार है।

स्वामी जी की कुछ सरल शिक्षाएँ

1. सबसे अच्छा स्वर्ग कहाँ है?
   – प्रेम करुणा और उदारता से भरे हृदय में।
2. सबसे शक्तिशाली व्यक्ति कौन है?
   – वह जो अहिंसा का अभ्यास करता है, जो अपमान, चोट और अत्याचार को मुस्कुराकर सहन कर सकता है।
3. सबसे अच्छा आहार क्या है?
   – श्रुतियों या उपनिषदों का श्रवण।

4. इस संसार में सबसे उत्तम वस्तु कौन सी है? – कष्ट।
5. सबसे बुरा अवगुण? – क्रोध।
6. सबसे अच्छा मनुष्य? – परोपकारी मनुष्य।
7. सबसे दुःखी मनुष्य? – धनवान मनुष्य।
8. सबसे अच्छा धर्म? – निष्काम सेवा।
9. सबसे कुरूप व्यक्ति कौन? – लोभी।
10. सच्चा पिता कौन? – गुरु।

प्रार्थना : – हे प्रभु ! मेरी इच्छा सबल बना दे, जिससे मैं प्रलोभनों का सँवरण कर सकूँ। इन्द्रिय तथा निम्न प्रकृति का दमन कर सकूँ, अपनी पुरानी आदतों को बदल सकूँ, आत्मार्पण को पूर्णतया सत्य बना सकूँ, मेरे हृदय में आसीन हो जा।।

एक क्षण भी इस स्थान से अन्यत्र कहीं नहीं जा।

मेरे शरीर, मन तथा इन्द्रियों को अपने काम में ला।

मुझे इसके योग्य बना कि मैं सदा सर्वदा तुझमें ही निवास करुँ।

स्वामी शिवानंद सरस्वती

परमहंस श्री स्वामी सत्यानंद सरस्वती
एक विराट व्यक्तित्व

परमहंस श्री स्वामी जी से मेरा परिचय उनके लेखों के द्वारा हुआ। 15 वर्ष पहले जब मैं अपने कमर दर्द के कारण ज्ञान दर्शन योगाश्रम भिलाई में आई, तो मुझे इस बात का तनिक भी आभास नहीं था कि इस टूटे फूटे शेड वाले आश्रम से मेरा इतना घनिष्ठ सम्बन्ध जुड़ जाएगा। मेरे गुरु स्वामी देवशंकरानन्द जी, श्री स्वामी जी के शिष्य और भक्त थे। उनका जीवन पूर्णतया गुरुदेव के श्री चरणों में ही समर्पित था। उन्होंने मुझे एक पुरानी योगविद्या पढ़ने के लिए दी। **"तुम मेरे कथन पर विश्वास मत करो। जो मैं बताता हूँ, उसका अभ्यास करो। यदि तुम्हें इसका अनुभव होता है तो मानना, अन्यथा नहीं"।**

—सत्यानंद सरस्वती

ये शिक्षा पढ़ कर मुझे बहुत अच्छा लगा। मैंने सोचा कि ये एक ऐसे संत हैं जो अपनी शिक्षाओं को किसी पर थोपना नहीं चाहते। इनमें इतनी हिम्मत है कि ये इस बात का दावा कर रहे हैं

डंके की चोट पर कि अपने अनुभव से ही सीखो और मुझे परखो। मुझे यह तरीका बहुत पसन्द आया। और एक दृढ़ निश्चय के साथ मैंने उनकी शिक्षाओं को परखने का निर्णय लिया, और आज यह लिखते हुए मुझे गर्व महसूस हो रहा है कि उनकी प्रत्येक शिक्षा मेरे अनुभव पर शतप्रतिशत खरी उतरी। लगन और मेहनत मेरे स्वभाव का एक सहज अंग है। विश्वास तो आरम्भ में थोड़ा सा ही चाहिए था, जो मेरे गुरु स्वामी देवशंकरानंद जी ने मेरे अंदर जागृत कर दिया। कक्षा में अधिकतर मैं उनके पास ही बैठती थी। और वह समय–समय पर श्री स्वामी जी की तपस्थली रिखिया की अनेक बातें मुझे बताते रहते थे। मेरे अनन्त सवालों का भी वो बड़े धैर्य के साथ उत्तर देते थे।

अपने अनुभवों और उनके चरित्र की गरिमा ने मेरे विश्वास की नीव कब दृढ़ कर दी, ठीक से कह नहीं सकती। परन्तु धीरे–धीरे मैं अनजाने में ही उनको बिना मिले ही उनकी शिष्या (भक्त) बन गई। उनके लेखों शिक्षाओं में, मैंने सच्चाई और सरलता की एक ऐसी झलक देखी जिसमें कहीं भी कोई

दुराव छिपाव नहीं था। योगाश्रम में आते–आते, मेरी शारीरिक अवस्था रोगी से स्वस्थ तक 1 वर्ष के भीतर ही पहुँच गई।

मैं गणित की शिक्षिका हूँ। बच्चों पर किए गये योग के अनेक प्रयोग भी सत्य की कसौटी पर शतप्रतिशत खरे उतरे। धीरे–धीरे मैं उनसे मिलने, दर्शन करने के लिए लालायित हो उठी। दिन रात मनन चिन्तन करने लगी, उनके व्यक्तित्व का, उनके चरित्र का। उनकी एक पुस्तक "योग साधना" जिसमें श्री स्वामी जी के साधकों को लिखे हुए पत्रों का संकलन है, ने मुझे अत्यधिक प्रभावित किया। उस पुस्तक को मैंने अनगिनत बार पढ़ा। एक एक पत्र को कम से कम 10 बार पढ़ा होगा। उनके एक–एक कथन का मनन, चिन्तन करते–करते, मुझे लगता कि हर बार इसमें कुछ नया है। उस पुस्तक को यदि मैं अपने लिए गीता कहूँ तो अतिशयोक्ति न होगी। मेरे अनेक संशयों का निवारण श्री स्वामी जी के सरल वाक्यों से हुआ। आज भी उनकी वह पुस्तक मुझे उतनी ही पसन्द है जितनी कई वर्ष पहले थी। और मुझे प्रतिदिन उसका एक पत्र पढ़ना बहुत अच्छा लगता है क्योकि उसमें से नित नूतन ज्ञान के हीरे मुझे प्राप्त होते हैं।

"जेहि के जेहि पर सत्य सनेहू, सो तेहि मिले न कछु संदेहू" – गोस्वामी तुलसी दास। रामायण की यह उक्ति मेरे जीवन में अक्षरक्षः सत्य हुई। कई वर्षो के पश्चात् 2 वर्ष पहले सन् 2005 में मुझे श्री स्वामी जी के शतचण्डी यज्ञ में जाने का सुअवसर प्राप्त हुआ। यज्ञ के प्रथम दिन ही उन्होंने दर्शन दिए। उनके बारे में इतना कुछ पढ़ रखा था, सुन रखा था कि मैं उनको देख कर आश्चर्य चकित हो उठी। उनका व्यक्तित्व एक सरल बच्चे की तरह था। एकदम हम सबके सामने आकर खूब बातें करने लगे। एक व्यक्ति को उठाया और उसकी प्रशंसा करने लगे। और एक व्यक्ति को उठाया और उसे अपना विशेष आशीर्वाद दिया। उनकी ऊर्जा, सरलता ने मुझे अन्तरतम तक अभिभूत कर दिया। यद्यपि उस दिन बैठने का स्थान अच्छा न मिलने के कारण मैं कुछ घंटे परेशान रही, परन्तु मेरा मन एक अलग लोक में ही था। उनके द्वारा दिए गए सरल प्रवचनों को सुन–सुन कर हम सब हँस–हँस कर लोट पोट हो रहे थे। शतचण्डी यज्ञ के पाँचों दिन, अपने वचनामृत में श्री स्वामी जी ने हमको डुबोया। उस गहरे सागर में डूबते

उतरते समय कब पंख लगा कर उड़ गया पता ही नहीं चला।

रिखियापीठ में श्री स्वामी जी ने अपना पूरा जीवन अपने गुरु श्री स्वामी शिवानन्द जी की शिक्षाओं को व्यवहार रूप में ही परिवर्तित करने में लगा दिया है। रिखिया के आसपास के लगभग 5 लाख लोगों का यज्ञ में आना, देवी प्रसाद के रूप में वस्त्र, बर्तन ग्रहण करना, हम सबने देखा। लगभग 2000 कन्याओं और बटुकों (लड़कों) को जो वहीं के निवासी हैं, श्री स्वामी जी ने प्रतिदिन नए वस्त्र दिए। बच्चों को पुस्तकें और स्कूल बैग भी दिए गए। प्रसाद जिसे वहाँ अक्षत् प्रसाद कहा जाता है हमें भी वस्त्र, चावल और पुस्तकों के रूप में मिला। मेरा मन सहज ही कह उठा कि धन्य हैं ऐसे संत जो प्रवचनों से नहीं अपने व्यवहार से लोगों को सेवा का दिव्य संदेश दे रहे हैं।

श्री स्वामी जी आज भी स्वयं को अपने गुरु का शिष्य मानते हैं। उन्होंने अपना पूरा जीवन उनकी शिक्षाओं को ही समर्पित किया है।

20 वर्षों तक योग का झण्डा विश्व में वैज्ञानिक प्रमाणों के बल पर उन्होंने फहराया। बिहार (मुंगेर) में विश्व के प्रथम

योग विश्वविद्यालय की नींव भी श्री स्वामी जी ने ही डाली। आज वहाँ एक भव्य आश्रम का निर्माण हो गया है जहाँ धर्म निरपेक्षता और विश्व बंधुत्व का दर्शन सहज ही दृष्टिगोचर होता है। सफलता के शिखर पर पहुँच कर श्री स्वामी जी ने मुंगेर आश्रम का त्याग करते हुए, प्रभु की प्रेरणा से रिखिया को अपनी तपस्थली चुना। पिछले कुछ वर्षों से श्री स्वामी जी वहीं पर एकान्त में रहकर अनेक साधनाएँ कर रहे हैं, विश्व कल्याण के लिए।

ईश्वर की कृपा से वह क्षेत्र आज एक वृहद् ऊर्जा का केन्द्र बनने के साथ–साथ सब योग विद्यार्थियों के लिए एक तीर्थस्थल भी बन गया है। स्वयं को लोगों का दिल जीतने के लिए विश्व का सम्राट घोषित करते हुए, श्री स्वामी जी ने 12 साल तक शतचण्डी यज्ञ का आयोजन किया जिसे राजसूय यज्ञ कहा गया। पिछले वर्ष 2007 में इस यज्ञ का समापन सफलता पूर्वक सम्पन्न हुआ। इतने बड़े संत और अंहकार का नाम मात्र भी निशान नहीं! आज कलियुग में सहसा विश्वास ही नहीं होता। धन्य हैं ऐसे संत जो अपने चरित्र की गरिमा से पृथ्वी

के कण कण को सुवासित कर रहे हैं। कभी–कभी सोचती हूँ कि ऐसे संत ही इस धरा पर ईश्वर का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं । हम सब भक्तों के अवगुणों को भुला कर, हमें दिन प्रति दिन दिव्य प्रेरणाएँ और उपहार प्रदान कर रहे हैं। मैं नतमस्तक हूँ ! अभिभूत हूँ!

परमहंस स्वामी निरंजनानंद सरस्वती–एक दिव्य व्यक्तित्व

स्वामी निरंजन 4 वर्ष की अल्पायु में ही अपने गुरु परमहंस स्वामी सत्यानंद सरस्वती जी की शरण में आ गए थे। यद्यपि श्री स्वामी जी द्वारा लिखित पत्रों से यह स्पष्ट हो जाता है कि यदि उन्हें, उनका मानस पुत्र कहा जाए तो अतिशयोक्ति न होगी। स्वामी निरंजन की माता जी श्री स्वामी जी की शिष्या हैं। जब उन्होंने श्री स्वामी जी से अपने लिए पुत्र की प्रार्थना की तो श्री स्वामी जी ने कहा, "तुम्हारे भाग्य में तो पुत्र नहीं है, परन्तु मेरे भाग्य में है।" अपने पत्रों के माध्यम से श्री स्वामी जी ने उनकी माता धर्मशक्ति जी को गर्भावस्था के दौरान मंत्र उच्चारण,

रामायण और गीता पाठ इत्यादि के निर्देश दिए। उनका नामकरण भी श्री स्वामी जी के श्रीमुख से हुआ।

जब मोह के कारण, धर्मशक्ति जी की बहन ने उन्हें आश्रम में जाने से रोकने का प्रयत्न किया और सुन्दर वस्त्र पहनाए, तब स्वामी जी ने उन वस्त्रों को उतार फेंका। इतनी छोटी उम्र और इतना दृढ़ वैराग्य ! इतना दृढ़ निश्चय ! बिहार योग विश्व विद्यालय की पुस्तकों में जब मैंने पढ़ा कि स्वामी जी को 11 वर्ष की अल्पायु में विदेशों में योग सिखाने के लिए भेज दिया गया था, तो मैं आश्चर्य चकित हो उठी। इन शब्दों को मैंने चार पाँच बार पढ़ा। 11 साल के बच्चे को पढ़ने लिखने की भी समझ ठीक से नहीं होती, फिर भला वह औरों को क्या सिखाएगा। आज बिहार योग विश्वविद्यालय के परमाचार्य होने के साथ साथ वह अनेक संस्थाओं का संचालन कर रहे हैं। पूरे विश्व में श्री स्वामी जी द्वारा प्रस्थापित योग केंद्रों का कुशल निर्देशन करते हुए अनेक नए केन्द्रों की स्थापना भी कर रहे हैं।

मुंगेर में उन्होंने एक बाल योग मित्र मण्डल के द्वारा भावी योग शिक्षकों की एक ऐसी आध्यात्मिक पीढ़ी तैयार की है, जो भारतीय संस्कृति में रची पगी है। धन्य हैं ऐसे संत जो अपने चरित्र की गरिमा से योग की मशाल लेकर संपूर्ण विश्व को प्रकाशवान कर रहे हैं। उनका व्यक्तित्व स्नेह और दृढ़ता का एक ऐसा अनोखा संगम है जो दुर्लभ है। स्नेहमयी माँ की भाँति जहाँ वह पग–पग पर अपने शिष्यों का पथ प्रदर्शन करते हैं, एक पिता का अनुशासन भी वह भली –भाँति रोपित करने में सक्षम हैं।

ऐसे संतों की शिक्षाओं को हम अपने जीवन में अपनाएँ।

अपने चरित्र की गरिमा को उज्जवल बनाएँ।।

इस विश्व के कोने कोने को योग की सुगंध से महकाएँ।

भारत को पुनः विश्व सम्राट बनाएँ।।

परमहंस स्वामी निरंजनानंद सरस्वती – एक प्रभावशाली व्यक्तित्व

ज्ञान दर्शन योगाश्रम (भिलाई) में आने के पश्चात् अपने गुरु पूज्य स्वामी देवशंकरानन्द जी द्वारा मैंने स्वामी शिवानन्द और स्वामी सत्यानंद की अनेकों शिक्षाओं को आत्मसात किया। परन्तु स्वामी निरंजन से मेरा परिचय श्री स्वामी जी की पुस्तकों अथवा उनकी पुस्तकों के द्वारा ही हुआ। यद्यपि उनकी पुस्तकें आरम्भ में मुझे कुछ कठिन प्रतीत होती थीं, परन्तु उनका आधुनिक वैज्ञानिक दृष्टिकोण धीरे–धीरे मुझे रास आने लगा। आधुनिक युग विज्ञान का युग है। सहज ही किसी की भी बात पर विश्वास करने को बड़े तो क्या बच्चे भी तैयार नहीं होते। अतः उनके द्वारा प्रदत्त सरल वैज्ञानिक विवेचन सबको झट पसन्द आ जाते हैं, खासकर बच्चों को।

स्वामी जी ने आज के युग की महती आवश्यकता को देखते हुए, प्रत्येक व्यक्ति को अपनी प्रतिभा जागृत करने का महत्वपूर्ण संदेश दिया है। प्रत्येक व्यक्ति के अन्दर एक अद्वितीय गुण है

जो ईश्वर ने उसको प्रदान किया है। परन्तु संसार में आ कर, ईर्ष्या, क्रोध और स्वार्थ के दामन को थामकर, व्यक्ति अपने से ही दूर बहुत दूर चला गया है। भोगों मे लिप्त रहते हुए, इन्द्रियों द्वारा विषयों के पीछे भागते हुए, अपने स्वार्थ के लिए ही व्यक्ति जीवन बिता देता है। बाहर की दुनिया की चकाचौंध ने, मानो मानव को अंधा सा ही कर दिया है। उसे अपने अन्दर की चमक दमक देखने का समय ही कहाँ है? बाहरी रूप रंग को सँवारते सँवारते, अपना अन्तर तो मैला कुचैला ही रह गया है।

ईश्वर ने प्रत्येक प्राणी को एक विशेष उद्देश्य से बनाया है, और उसी प्रयोजन को सिद्ध करने के लिए उसके अन्दर वह गुण भी दिया है। **'एक हाथी जो काम कर सकता है, वह एक चींटी नहीं कर सकती।'** –**स्वामी चिदानंद**

जिस दिन व्यक्ति को इस यथार्थ का आभास होने लगता है; वह मुक्त होने लगता है। अपने ही बनाए हुए मकड़ी के जाल से वह निकल आता है। दूसरों से स्वयं की तुलना बन्द कर देता है। तब शुरु होती है उसकी आन्तरिक खोज। आखिर मैं कौन हूँ? मैं किसलिए इस पृथ्वी पर आया हूँ? स्वामी जी ने आज योग का

यही लक्ष्य व्यक्ति को दिया है।

"न मोक्ष उपलब्धि है न समाधि

अपितु जीवन में अपनी प्रतिभाओं का सही प्रकार से उपयोग कर सके, यही योग की उपलब्धि है।"

– परमहंस स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

स्वामी जी ने मंत्रों की तंरगों का महत्वपूर्ण वैज्ञानिक पक्ष जन साधारण के सामने रखा है। श्री स्वामी जी द्वारा प्रेरित शतचण्डी महायज्ञ में हजारों विदेशी भक्त, वैदिक मंत्रों और कीर्तनों पर झूमते देखे जा सकते हैं। ध्वनि की तरंगों द्वारा एक विशेष ऊर्जा का निर्माण आज सर्वविदित है। आदि गुरु श्री शंकराचार्य द्वारा रचित सौंदर्यलहरी, तुलसीदास रचित रामायण और श्री मद्भगवद्गीता, कुछ ऐसे ग्रंथों के नाम हैं जो मंत्रों का अद्भुत संकलन हैं। जब इन मंत्रों का उच्चारण भाव से किया जाता है, तो आश्चर्यजनक परिणाम सहज ही प्राप्त होते हैं। सूर्यनमस्कार मंत्रों के साथ करने पर, शरीर का रोम–रोम एक अनिर्वचनीय ऊर्जा से भर जाता है।

स्वामी जी ने मन को प्रशिक्षित करने का सरल सूत्र विश्व को

दिया है। योग के सरल अभ्यासों को नियमित रूप से करते हुए व्यक्ति अपने मन के प्रति सजग होता है; अपने मन की प्रकृति को जान पाता है, समझ पाता है। तब धीरे–धीरे अपने दुर्गुणों से व्यक्ति का परिचय होता है, जो उसे कमजोर बनाते हैं। अपने व्यक्तित्व के समर्थ पक्ष को भी व्यक्ति समझ पाता है। तब व्यक्ति शेखचिल्ली की तरह सपने देखना बन्द करते हुए, अपनी योग्यता के अनुरूप एक सार्थक लक्ष्य का चुनाव करने में समर्थ होता है। जिस प्रकार एक माली बगीचे में से जंगली पौधे निकाल देता है और अच्छे पौधों की गुड़ाई, निराई करता है; उसी प्रकार व्यक्ति अपने अन्दर के व्यक्तित्व को निखारना, सँवारना आरम्भ कर देता है। वह मन जो सदा बाहर की दुनिया में ही रमा रहता था, अन्तर्मुखी होने लगता है। श्वास एक सशक्त माध्यम है मन को प्रशिक्षित करने का।

''एक प्रशिक्षित मन लेज़र बीम की तरह शक्तिशाली होता है।''

– स्वामी निरंजन

"ऐसा मन ठोस पदार्थ का सृजन करने में भी सक्षम है।"

– स्वामी सत्यानंद

कलियुग में साधना और उससे समाधि की प्राप्ति अत्यधिक दुष्कर कार्य है। अतः स्वामी जी का यह विवेचन, मन के किसी गहरे कोने में उतरते हुए, व्यक्ति को एक गहन आत्मविश्वास से भर देता है। स्वामी जी की इन सरल शिक्षाओं का मनन, चिंतन करते, मेरे कदम कब प्रवृत्ति से निवृत्ति मार्ग की ओर बढ़ने लगे ठीक से याद नहीं। परन्तु धीरे–धीरे मन एक अनिर्वचनीय आनन्द से भर गया। प्रवृत्ति से निवृत्ति का सरल अर्थ भी मुझे योग विद्या में अत्यधिक पसन्द आया था। इच्छाओं का धीरे–धीरे कम होना; सेवा, प्यार और निःस्वार्थ भाव का बढ़ना ही तो निवृत्ति मार्ग की शुरूआत है।

धन्य हैं ऐसे सद्गुरु जो चेतना के उस उच्च स्तर पर पहुँचने के पश्चात् भी, हम जैसे साधारण शिष्यों के लिए गूढ़ शिक्षाओं को इतने सरल रूप में हमें प्रदान कर रहे हैं। ऐसे सद्गुरु के चरणों में मेरा शत्–शत् प्रणाम!

गुरु

साधारणतया गुरु शब्द का अर्थ शिक्षक से लिया जाता है। परन्तु गुरु शब्द शिक्षक से कहीं अधिक व्यापक है। गुरु एक तत्त्व है। बाह्य गुरु केवल उस तत्त्व का प्रतीक है। गुरु का अर्थ यदि सरल शब्दों में लेना चाहें तो वह व्यक्ति जो हमें अन्धकार से प्रकाश की ओर ले कर जाए। अन्धकार का अर्थ है अन्तःकरण का अज्ञान! इसी अज्ञान के कारण व्यक्ति स्वयं को केवल शरीर मानता है। और जब शरीर पर ही चेतना केन्द्रित होती है तो उसे देहाभिमान कहा जाता है। मानव के सारे दुःखों की जड़ देहाभिमान ही है।

गुरु एक ऐसा व्यक्ति है जो देहाभिमान से ऊपर उठ चुका है। वह उस मार्ग का पथिक रह चुका है। अतः गुरु पूर्णतया समर्थ है, साधक का मार्ग दर्शन करने के लिए। गुरु जानता है कि यह बहुत कठिन साधना है। अतः वह साधक को कदम–कदम पर अपनी ऊर्जा और इच्छा शक्ति का सम्बल प्रदान करता है। जिस प्रकार एक माँ अपने बच्चे को चलना सिखाती है, गिरने पर प्यार से उसे उठाती है। माँ ही बच्चे को

पुनः हिम्मत देती है और बच्चा! वह तो माँ को ही अपना सर्वस्व समझता है और उस पर पूर्ण विश्वास करता है।

माँ की ही भाँति सद्गुरु पूर्ण निःस्वार्थ होता है। यदि व्यक्ति पूर्ण विश्वास के साथ गुरु की शरण में जाता है, तो गुरु अपनी कृपा उस पर अवश्य बरसाते हैं। आवश्यकता है केवल विश्वास की! समर्पण की! परन्तु यह बिन्दु भी विचारणीय है कि कलियुग में जहाँ प्रत्येक नुक्कड़ पर नकली गुरु अपने स्वार्थ के कारण अनेक भोले, निरीह लोगों को छल रहे हैं, विश्वास करना एक अत्यधिक कठिन कार्य है; विश्वास के बिना समर्पण तो असम्भव है।

स्वामी सत्यानन्द ने कहा है कि यदि व्यक्ति पूर्ण विश्वास करके एक नकली गुरु की शरण में भी जाता है, तो भी उसे लाभ ही होता है। एक सच्चे शिष्य को कोई नहीं छल सकता। यदि शिष्य सच्चा है तो उसे अवश्य लाभ ही होगा। आरम्भ में अपने विवेक का प्रयोग करते हुए यदि शिष्य सावधानी पूवर्क कदम बढ़ाता है, प्रभु उसे सही मार्ग दर्शन स्वयं देते हैं।

गुरु आज्ञा ही केवलम्

आज तक हम सब लोग गुरु की कृपा ही माँगते हुए जी रहे हैं। परन्तु हम में से कितने ऐसे हैं जो गुरु की आज्ञा पढ़ते हैं ? यदि पढ़ते भी हैं तो उसका कितना मनन, चिंतन करते हैं ? मनन, चिंतन के पश्चात् हम में से कितने उसको व्यवहार में लाते हैं ?

एक सद्गुरु की तुलना शास्त्रों में भगवान से की गई है। यदि हम पूरी श्रद्धा और विश्वास के साथ उनकी एक शिक्षा का भी पालन करते हैं, तो उनके सहज ही कृपा पात्र बन जाते हैं। अपने अनुभव से मैं यह बात दावे के साथ कह सकती हूँ। परमगुरु स्वामी शिवानंद की शिक्षाओं से प्रेरित हो कर जब मैंने सेवा का दृढ़ निश्चय किया तो अनेक बाधाओं का सामना करना पड़ा। परन्तु उन बाधाओं से न डर कर मैंने अपने प्रयत्न को जारी रखा। गुरुदेव से ही सच्चे दिल से प्रार्थना की, कृपा की नहीं, सेवा के अवसर देने की। आज मैं गर्व से कह सकती हूँ कि उन्होंने मेरी झोली में इतनी सेवा डाल दी है कि मैं सेवा करने में

सारा समय व्यस्त रहती हूँ। और कृपा ! अरे वह तो स्वयं ही बरस रही है बिन माँगे ! बिन बुलाये ! अनेक व्यक्ति मेरी इस सेवा का सहर्ष ही एक अनिवार्य अंग बन गए हैं। मेरे सब कार्य गुरु कृपा से यंत्रवत होते जा रहे हैं। मैं हैरान हूँ ! लोग हैरान हैं ! मेरी झोली में आज इतनी सेवा, कृपा आ रही है जिसे मैं संभाल नहीं पा रही हूँ।

तो आओ ! हम सब गुरु कृपा के अधिकारी बनें। गुरु की आज्ञाओं का अपने जीवन में पालन करें। उनकी करुणा, दया और ममता के योग्य अधिकारी बनें। अनेक संपदाएँ द्वार पर हमारा इन्तजार कर रही हैं। हम देर न करें। गुरु तो दोनों हाथ फैला कर हमारा इन्तजार कर रहे हैं। अपने चरित्र के द्वारा वह बार–बार हमें जगा रहे हैं। सेवा के मार्ग पर वह स्वयं चल रहे हैं। हमें राह दिखा रहे हैं। आवश्यकता है कि हम सजग बनें। अपनी कमजोरियों को दूर करें। दृढ़ बनें। असफलताओं से न घबराएँ। उन पर पूरा भरोसा रखें। अरे ! वह तो करुणानिधान हैं। उनको आना ही पड़ेगा !

<u>विश्वास हारना नहीं जानता। विश्वास रुकना नहीं जानता।</u> **– स्वामी सत्यानंद**

शिष्य की पात्रता – गुरु कृपा

गुरु शब्द का अर्थ है अहंकार को हटाने वाला। साधारणतया गुरु को अध्यापक के साथ जोड़ा जाता है परन्तु वास्तविकता इससे भिन्न है। गुरु वह अध्यापक है जो निःस्वार्थ भाव से प्रेम के द्वारा अपने अन्तर्मन से अपने शिष्य का उत्थान करने के लिए उद्यत रहता है। गुरु एक साधारण मानव दिखने में भले ही हो परन्तु उसके अन्दर ईश्वरत्व के समस्त गुण कूट–कूट कर भरे रहते हैं। जिस प्रकार ईश्वर सब प्राणियों का केवल भला ही चाहता है और करता है, उसी प्रकार गुरु भी कभी माँ बनकर अपने शिष्य को असीम लाड़ और प्यार देता है और एक माँ की ही भाँति शिष्य को प्रगति के लिए उसकी दुःख और कठिनाइयों के रूप में परीक्षाएँ भी लेता है। गुरु पिता की भाँति कदम–कदम पर शिष्य की रक्षा भी करता है।

गुरु और शिष्य के संबन्ध में सर्वाधिक महत्वपूर्ण है, शिष्य और उसकी पात्रता। शिष्य का समर्पण और विश्वास जितना अधिक होता है, गुरु की कृपा तदनुसार वह ग्रहण करता है।

आज अनेकों व्यक्ति गुरु का चोला पहनकर इस पावन छवि को धूल धूसरित करते हुए, स्वार्थ के लिए शिष्यों का शोषण कर रहे हैं। अतः आधुनिक युग में यह आवश्यक है कि जिस व्यक्ति के भीतर गुरु की खोज प्रारंभ करने की इच्छा हो, वह अत्यंत सावधानी और धैर्य का प्रयोग करे और व्यर्थ में अपना समय, धन और विश्वास न गवाँए। जिज्ञासु शिष्य को आवश्यकता है, स्वयं के भीतर गुरु की चाह बढ़ाने की और अपने दुर्गुणों को हटाने की। प्रत्येक व्यक्ति अपने व्यक्तित्व की कमजोरियों को भली भाँति जानता है। अतः धीरे–धीरे उन कमजोरियों को हटाते हुए, अपने उत्थान का मार्ग वह स्वयं प्रशस्त कर सकता है।

सरलता, सहजता, सत्य और ईमानदारी आदि कुछ ऐसे गुण हैं जो स्वतः ही एक सद्गुरु को शिष्य के पास ले आते हैं। एक सद्गुरु को भी एक सुयोग्य शिष्य की उतनी ही खोज रहती है जितनी शिष्य को गुरु की। निःस्वार्थ सेवा व्यक्ति का हृदय सहज ही पवित्र बनाती है। धीरे–धीरे जब हृदय पवित्र हो जाता है तो गुरु स्वयं व्यक्ति के जीवन में प्रकट होता है। गुरु के आगमन से शिष्य का अन्तर्मन शान्ति और प्रसन्नता से भर

उठता है, बिना किसी कारण के। एक सद्गुरु का आगमन, शिष्य के जीवन की सर्वाधिक महत्वपूर्ण उपलब्धि है। जैसे–जैसे शिष्य का विश्वास गुरु पर बढ़ता जाता है, वह गुरु की शिक्षाओं का पालन तन, मन और धन से करता है। जो शिष्य पूर्णतया गुरुमुखी बन पाता है, गुरु की असीम कृपा उस पर बरसने लगती है।

अतः गुरु कृपा प्राप्त करने के लिए बाह्य आडम्बर की शरण में जो शिष्य जाते हैं, वो अपना ही नुकसान करते हैं। एक सद्गुरु, शिष्य के मन और आत्मा की गहराई को देख सकता है, अतः उससे दिखावा कैसा ? जो शिष्य अपनी अल्पबुद्धि के कारण इन सब प्रपंचों में पड़ता है, वह अपना ही नुकसान करता है। केवल मुख से गुरु की प्रार्थना गाने या उनकी प्रशंसा के पुल बांधने से कहीं ज्यादा आवश्यक है कि गुरु की शिक्षाओं को शिष्य सुने, पढ़े और उनका मनन, चिंतन करते हुए, उन्हें अपने जीवन का एक अंग बनाने का प्रयत्न करे। गुरु की शिक्षा, जब शिष्य व्यवहार में लाता है तभी वह गुरु के सरल वाक्यों की गहराई को समझते हुए अपने जीवन का उत्थान करने में सक्षम

होता है। एक सद्गुरु पूर्णतया निःस्वार्थ होता है। वह केवल जन कल्याण की भावना से पृथ्वी पर निवास करता है। अतः यदि शिष्य में योग्यता है तो, गुरु स्वयं ही उसका उत्थान करने के लिए उत्सुक रहता है। श्रद्धा और विश्वास कहीं बाजार से नहीं खरीदा जा सकता और श्रद्धा और विश्वास, दो ऐसे महत्वपूर्ण गुण हैं जिनके बिना गुरु तो क्या ईश्वर की कृपा भी असंभव है। महाकवि तुलसी दास ने रामचरित मानस में लिखा है–

भवानी शंकरौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ।
याभ्यां विना न पश्यन्ति सिद्धाः स्वान्तः स्थमीश्वरम्।

एक शिष्य के नाम पत्र

कौन कहता है गुरु आते नहीं।
उनसे भाई पिता या सखा का सम्बन्ध हम स्थापित करते नहीं।।
वो हमारे थे, वो हमारे हैं, वो हमारे रहेंगे।
यकीं हम करते नहीं।।
गुरु वाक्य पर भरोसा हम करते नहीं ।
गुरु आज्ञा का पालन हम करते नहीं।।

गुरु के सामने, गुरु के पीछे छल कपट का साथ हम छोड़ते नहीं।
गुरु जो सच सिखाते हैं, उसको हम मानते नहीं।
फिर हम चाहते हैं गुरु कृपा मिले।
फिर हम चाहते हैं हमारा नाम हो।।
फिर हम चाहते हैं गुरुजी हमे बड़ी पदवी दे दें।
फिर हम चाहते हैं गुरुजी हमें विशेष स्थान दे दें।।
औरों से ईर्ष्या हम छोड़ते नहीं।
गुरु के दरबार में अपना अंहकार हम छोड़ते नहीं।
हमारी इच्छा गर गुरु नहीं मानते, क्रोध का दामन हम छोड़ते नहीं। ईश्वर के प्रत्येक कार्य में भलाई है, हम मानते नहीं।।
गुरु गर सजा देता है तो हमारे भले के लिए देता है, हम समझ पाते नहीं।
दिन रात गुरु आज्ञा की अवहेलना करते हैं।
काम, क्रोध, लोभ, मोह, और मद को पोसते हैं।
अब गुरु भी क्या करे।
शक्ति होते हुए भी, वह शक्ति पात कैसे करे ?
गुरु कृपा की वर्षा होते हुए भी, हम ग्रहण कर पाते नहीं।

गुरु आनन्द सर्वत्र होते हुए भी, हम महसूस कर पाते नहीं।।
गुरु के श्री चरणों में आत्म समर्पण हम करते नहीं।
शिष्य होने का हम करते हैं दावा, योग्य शिष्य बन पाते नहीं।
'गुरु आज्ञा ही केवलम्' के अमोघ अस्त्र का लाभ उठा पाते नहीं।
गुरु वाक्य के रामबाण अस्त्र का लाभ उठा पाते नहीं।।
निन्दा, चुगली और परदोष दर्शन को हम छोड़ पाते नहीं।
हमारे अन्दर ही गुरु है, उसको हम जान पाते नहीं।।
अरे शिष्य, जाग तू। स्वयं को टटोल। स्वयं को जान।
अपने से ही बच कर तू कहाँ जाएगा?
औरों को तो तू धोखा दे सकता है, अन्दर का गुरु तो सब कुछ देख रहा है।
तेरे अन्दर भी एक गुरु है, जो सर्वसमर्थ है।
जिस दिन तू अपने अवगुणों को छोड़ना शुरु करेगा, अपने अन्दर के गुरु से जुड़ेगा।
तब तुझे न होगी दरकार बाह्य गुरु की।
तब तुझे अपने भीतर ही सद्गुरु की प्राप्ति होगी।।
बाहर का गुरु तो केवल एक प्रतीक है।

बाहर का गुरु तो केवल प्रतिबिंब है।।
तेरे अन्तर के गुरु का। तेरे अन्तर के ईश्वर का।।
यही अन्तिम सच है, जिसे तू भूल बैठा है।
शुद्ध होने से ही तू उस गुरु को जान पाएगा।
शुद्ध होने से ही तू उस गुरु को सुन पाएगा।
शुद्ध होने से ही तू उस गुरु को देख पाएगा।।
रहे दिन रात तेरे संग। देखे दिन रात तेरे सब रंग ढंग।।
उससे तू न बच पाएगा।
यदि छल कपट करेगा, तो अपने ही पैरों पर कुल्हाड़ी मारेगा।।
कैसा तेरा यह शिष्यत्व? कैसा तेरा यह अभिमान?
सेवा का तू धर ले व्रत । प्यार का तू ले ले व्रत।।
दान का तू ले ले प्रण। सेवा जो निष्काम हो।।
प्यार जो निःस्वार्थ हो। दान जो सात्विक हो।
इसी से होगी तेरी शुद्धि। दूर होगी तेरी कुटिल बुद्धि।।
जब तू शुद्ध होगा, तभी तू बुद्ध होगा।
गुरु दौड़े चले आएँगे तुझे गोद में उठाएँगे।।
बचाएगे तुझे हर वार से, बचाएँगे तुझे हर मुसीबत से।

तुझे अपना प्यारा बच्चा बनाएँगे।।
फिर कहाँ का दुःख? और कहाँ का विषाद?
गुरु के पीछे ईश्वर भी चले आएँगे।।

गुरु कृपा

एक आध्यात्मिक साधक के लिए गुरु कृपा का अतिशय महत्व है। जीवन में एक सद्गुरु की प्राप्ति होना और फिर उनका कृपा पात्र बनना बड़े सौभाग्य की बात है। जिस प्रकार माता पिता अपने सब बच्चों से स्नेह करते हैं, परन्तु जो बच्चा सरल, भोला और आज्ञाकारी होता है, उसके लिए माँ बाप के हृदय में एक विशेष स्थान होता है। ठीक इसी प्रकार का सम्बन्ध प्रत्येक शिष्य का सद्गुरु से होता है। दूर रहने पर भी गुरु अपने शिष्य की आध्यात्मिक प्रगति के लिए प्रयत्नरत रहता है। कई साधक गुरु से एक भावनात्मक संबन्ध स्थापित करते हैं, जीवन की परिस्थितियों और आवश्यकताओं के अनुरूप। जैसे माँ का अथवा पिता का। सद्गुरु यद्यपि अपने सब शिष्यों का ध्यान रखते हैं, परन्तु शिष्य की आध्यात्मिक प्रगति ही उसका मुख्य

उद्देश्य होता है। अनेकों साधक सद्गुरु के सामने तो उनकी आज्ञाओं का पालन खूब मन से करते हैं, परन्तु गुरु की अनुपस्थिति में उनकी शिक्षाओं का महत्व नहीं समझ पाते और चूक जाते हैं। आध्यात्मिक प्रगति के लिए सत्संग का महत्व प्रत्येक ग्रंथ में वर्णित है। आज विज्ञान की प्रगति के कारण पुस्तकें, कैसेट और सी.डी. का प्रचलन एक साधारण बात है। अतः यदि साधक इन सत्संग के साधनों का प्रयोग करते हुए, गुरु की शिक्षाओं के तत्त्व को आत्मसात करने का प्रयत्न उनको व्यवहार में लाकर करता है, तो उसका जीवन आनन्द से भर उठता है। और गुरु ! वह तो शिष्य के उत्थान के लिए सदैव उतावला रहता है। बाह्य आडम्बर केवल एक संसारी आदमी को कुछ समय के लिए प्रभावित कर सकते हैं। परन्तु एक सद्गुरु इन सबसे ऊपर शिष्य के अन्तर्मन का ज्ञाता होता है। अतः छल, कपट, झूठ देखकर वह व्यथित हो जाता है। उस की शिक्षाओं का पठन, श्रवण, मनन और निदिध्यासन दिखने में साधारण होते हुए भी, उन शिक्षाओं में शिष्य का कायाकल्प करने की क्षमता होती है। आवश्यकता है अपनी बुद्धि के द्वार खोलने की!

गुरु के श्री चरणों में आत्मसमर्पण करने की! "**मानवता की सेवा ही आत्मसाक्षात्कार का रहस्य है**।"

— स्वामी शिवानंद सरस्वती

आज कितने साधक परम गुरुदेव की इस सरल शिक्षा को व्यवहारिक रूप में आंतरिक स्तर पर अपना पाते हैं। गुरु कृपा का इच्छुक, आत्म साक्षात्कार का इच्छुक, प्रत्येक शिष्य अपने मन को टटोले और पूछे 'क्या मैं सही रूप में मानवता की सेवा कर रहा हूँ?'

गुरु कृपा की अजस्त्र धारा

आखिर क्या है गुरु कृपा? और उसका स्रोत क्या है? क्यों ऐसा देखा जाता है कि चिरकाल से जुड़ने के पश्चात् भी, गुरु के द्वार पर नाक रगड़ने के पश्चात् भी, अनेक शिष्य उनकी कृपा से अछूते ही रह जाते हैं। शायद ये उनका भाग्य है कि गुरु का सान्निध्य तो उन्हें मिला, परन्तु इतनी बुद्धि नहीं मिली कि स्वयं को खाली कैसे करें? अपने को गुरु चरणों में समर्पित कैसे करें? गुरु के द्वार पर बुद्धि की अपेक्षा सरलता का मूल्य कहीं अधिक

है। सरलता भी ऐसी जो निष्कपट हो, छल रहित हो। गुरु शिष्य के मन के अन्दर, आत्मा के अन्दर झाँक सकता है। अतः ऊपर का बनावटी व्यवहार उसे भ्रमित नहीं कर सकता। इसलिए ऐसा देखा गया है कि जिनको व्यवहारिक रूप में सफल नहीं समझा जाता, वो गुरु के प्रिय होते हैं।

गुरु आज्ञा का पूरे मन से पालन ही, गुरु कृपा प्राप्त करने का सरलतम तरीका है। यदि शिष्य सरल मन से गुरु की आज्ञा का पालन, श्रद्धा और विश्वास से करता है, तो गुरु कृपा के अनेक आश्चर्यजनक परिणाम उसे प्राप्त होते हैं। अधिकतर शिष्य, गुरु जी के दर्शन में अधिक और शिक्षाओं पर ध्यान कम देते हैं। गुरु की अनेक शिक्षाओं के सरल होने के बावजूद भी उनका पालन करना नहीं चाहते।

कुछ वर्षों से योग विद्या में परम गुरु शिवानंद और श्री स्वामी जी के लेख पढ़ते–पढ़ते, मैंने उनके प्रयोग करने का निर्णय लिया। मेरे आश्चर्य की सीमा न रही, जब उनकी प्रत्येक शिक्षा मेरे जीवन में घटित होने लगी। छोटी से छोटी शिक्षा की गहराई, धीरे–धीरे मुझे अपने अनुभव से समझ आने लगी। मेरे अनुभवों

ने मेरी गुरु भक्ति कब दृढ़ कर दी, मैं ठीक से कुछ कह नहीं सकती। परन्तु इतना मैं अवश्य कहना चाहूँगी, कि धीरे–धीरे मेरे जीवन में शान्ति और प्रसन्नता की वृद्धि होने लगी। शारीरिक रोग भी पीछा छोड़ने लगे और प्रत्येक कार्य में सफलता सहज ही मिलने लगी। अनजाने सूत्रों से मदद स्वतः आने लगी।

परमहंस स्वामी निरंजन ने पुनः पुनः लिखा है कि "गुरु और शिष्य का संबंध भावनात्मक न हो कर गुरु शिक्षा पर आधारित है।" जो शिष्य गुरु कृपा प्राप्त करना चाहते हैं, गुरु शिक्षा को भगवद् वाक्य मान कर उसका पालन करें। प्रारंभ में थोड़ा सा विश्वास आश्चर्य जनक परिणाम ला सकता है।

गुरु भक्ति

गुरु की भक्ति शिष्यों को करते देखा।
गुरु की भक्ति से शिष्यों को फिसलते देखा।
फिसलते, डगमगाते और गिरते देखा।
भक्त होने का दावा करते–करते, गुरु अवज्ञा करते देखा।

गुरु अवज्ञा का भयानक फल भुगतते देखा।
कैसा है ये मन? एक पल में भागे। एक पल में डूबे।।
एक पल में गिराए। एक पल मे गुरु विमुख कराए।
शिष्यों सावधान! सतर्क! सजग! इस नीचे मन से।
शिष्यों सावधान! सतर्क! सजग! इस दुनिया की चकाचौंध से।
शिष्यों सावधान! सतर्क! सजग! गुरु अवज्ञा के कृत्य से।।
अपनी अक्ल मत लड़ाओ। ये कुछ काम न आएगी।
अपनी बृद्धि न भिड़ाओ। ये अवश्य अनेक दुख लाएगी।
गुरु तो है एक दिव्य आत्मा। गुरु तो है हमारा परमात्मा।।
वह जाने क्या अच्छा क्या बुरा ? वह जाने कब हमको क्या चाहिए?
कमी है हमारे विश्वास की। कमी है हमारी श्रद्धा की।।
जिस दिन विश्वास पक्का हो जाएगा। भाग्य का द्वार ही खुल जाएगा।।
बदल जाएँगे तेरे रंग ढंग। दुनिया में चमकेंगे तेरे रंग।।
लोग पूछेंगे तेरे हाल। लोग बदलेंगे अपनी चाल।।

तेरे पीछे सब चलेंगे। तेरी सफलता का राज पूछेंगे।।
हे मानव एक सद्गुरु का तू कर ले संग। जीवन में भर ले अभंग आनन्द।।
गुरु के आने से जीवन ही बदल जाएगा। चारों ओर प्रकाश छा जाएगा।।
कौन जाने तू कब निर्वाण पा जाएगा?
गुरु आज्ञा से शिष्य को फलते फूलते देखा। सबका प्यारा बनते देखा।।
गुरु की आज्ञा से शिष्य को सफल होते देखा। सबको हैरान होते देखा।।
गुरु कृपा से भगवद् कृपा मिलते देखा। गुरु कृपा से मालामाल होते देखा।।
गुरु कृपा इतनी सरल? इतनी सहज? इतनी पास?
शिष्य का भोलापना ही करे उसका उद्धार। शिष्य का विश्वास ही करे उसका उद्धार।।
गुरु तो है प्यार का भंडार।

गुरु की महिमा

गुरु ही मेरी नैया, गुरु ही मेरा खिवैया।
गुरु ही मेरा रक्षक, गुरु ही मेरी दुनिया।।
गुरु के चरणन में सीस नवाऊँ निश दिन।
गुरु से ही अनन्त ऊर्जा पाऊँ निश दिन।।
गुरु की कृपा में नहाऊँ निश दिन।
गुरु की महिमा मैं गाऊँ निश दिन।।
सद्गुरु गर एक मिल जाए। जीवन की दिशा ही बदल जाए।।
रे मानव! खोया है तू किन गलियन् में।
दुःख ,चिंता और क्रोध की नदियन् में।।
जरा बाहर तो आ, दिल से पुकार।
सद्गुरु बाहर ही खड़ा, दोनों हाथ पसारे।
सद्गुरु तुझे पुकारे, सद्गुरु तुझे बुलाए।
अच्छे कर्मों की खेती तू कर ले।
सेवा, प्यार और दान का नित नेम तू कर ले।।
मिटेंगे तेरे सब क्लेश, एक सद्गुरु के आने से।
बनेंगे तेरे सब काम, एक सद्गुरु के आने से।।

इस लोक और उस लोक में सफलता तुझे मिलेगी।
सुख, शांति और प्रसन्नता से तेरे जीवन की कली खिलेगी।।
अब देर न कर। उठ जाग! समय निकलता जा रहा ।
साँस खर्च होता जा रहा। ऐसा न हो तू चूक जाए।।
जन्म मरण के चक्कर में ही पड़ा रह जाए।।

अपने गुरु के गुरु पूर्णिमा सन्देश स्वामी सत्यानंद और स्वामी शिवानंद की शिक्षाओं से

गुरु पूर्णिमा हिन्दुओं का एक महत्वपूर्ण पर्व है। इस दिन गुरु अपने सब शिष्यों का हृदय छूता है। तैयार रहो ! गुरु का आशीर्वाद ग्रहण करने के लिए अपने हृदय और मन के द्वार खोल दो।

जीवन में दो तरह की परिस्थितियाँ आती हैं। मन के मुताबिक या मन के विरूद्ध। तामसिक व्यक्ति हमेशा अच्छी, राजसी हमेशा बुरी को अच्छी में बदलना चाहता है। परन्तु

सतोगुणी दोनों में अपना सन्तुलन बनाए रखता है। हम सब को सदा खुशी चाहिए। परन्तु हमारी इच्छा के अनुरूप परिस्थितियाँ नहीं बदलतीं। जीवन में अनेक अनचाहे परिवर्तन होते हैं। जब लोग हम से खुश होते हैं, हमें बहुत अच्छा लगता है। जैसे ही कठिनाईयों या निन्दा से हमारा सामना होता है, हम घबरा जाते हैं; अपना सन्तुलन खो बैठते हैं। कठिनाईयाँ हमारा मनोबल बढ़ाती हैं; हमारी मानसिक शक्ति, सन्तुलन और स्थिरता को बढ़ाती हैं। अतः कठिनाईयों से मत डरो ! उनका डट कर सामना करो ! जब लोग हमारी निन्दा करें या हम पर दोषारोपण करें; तो हम उनका धन्यवाद करें। उन पर क्रोध करने की अपेक्षा उन पर दया करें। प्रारम्भ में यह कठिन अवश्य है; परन्तु अभ्यास से असम्भव को भी संभव बनाया जा सकता है। केवल कमजोर व्यक्ति ही क्रोध का सहारा लेता है। वीर वही है, जो अपमान का न केवल सामना करे, अपितु उस व्यक्ति को दुआ भी दे। यदि हम छोटे–छोटे अपमान से डर जाते हैं, निंदा सहन नहीं कर पाते; तो लोभ, अहंकार, क्रोध, आसक्ति और इच्छा का त्याग

कैसे करेंगे ?

जीवन के हर कदम पर आन्तरिक शान्ति बनाए रखना सीखो। पूरा विश्व तुम्हें गाली देता रहे, परन्तु तुम अपना आन्तरिक सन्तुलन बनाए रखो। याद रखो जीवन में परिस्थितियाँ हमारी इच्छा के अनुरूप नहीं बदलेगी। जीवन में तूफानों का सामना साहस और धैर्य से करो।

आज ही दृढ़ निश्चय करो :–

हे प्रभु :

मुझे मुसीबतों और कठिनाईयों का हार पहनाओ ! मेरे अहंकार पर गाली और निन्दा का चाबुक लगाओं। ताकि मैं कठिनाई का सामना साहस के साथ कर सकूँ। मुझे इतनी शक्ति दो कि मैं हर परिस्थिति में अपना मानसिक संतुलन बनाए रख सकूँ। सदा !

और यदि तुम्हें अभी भी इच्छा है सुख की, प्यार की, प्रशंसा की, तो यह साधना पथ छोड़ दो। अपने जीवन के लिए एक दृढ़ संकल्प लो।

दुःख और दुष्टों को मेरा प्रणाम

जी में आता है तेरे कदमों में बैठूँ।
तुझे निहारुँ, तेरी ऊर्जा को ग्रहण करुँ।
जी में आता है सदा दुःख आए। क्यों?
क्योंकि दुःख में तू सदा याद आता है।
क्योंकि दुःख में तू सदा प्यार करता है।
क्योंकि दुःख में तू सदा गोद में बिठाता है।।
सुख, मुझे न चाहिए। क्यों ?
क्योंकि सुख में, मैं तुझे भूल जाता हूँ।
क्योंकि सुख में, मन चंचल होता है।।
क्योंकि सुख में, अंहकार आता है।
क्योंकि सुख विनाश की ओर ले जाता है।।
तुझ से दूर, तेरे अनुभव से अलग,
अब जीने को जी नहीं चाहता।

धन्य हैं वो लोग जो दूसरों को दुःख देते हैं।
क्योंकि अनजाने में ही वो दूसरों को प्रभु की ओर धकेल देते हैं।
क्योंकि अनजाने में ही वो दूसरों को एक सद्गुरु की तलाश में उद्यत करते हैं ।
क्योंकि अनजाने में ही वो दूसरों के अनन्त सुख का मार्ग प्रशस्त करते हैं।।
दुष्टों को मेरा शत्–शत् प्रणाम।
जो स्वयं बुरे बन कर दूसरों का कल्याण करते हैं।।
दुष्टों का हार्दिक स्वागत है।
क्योंकि गर वो न होते तो संतो की कद्र कैसे होती।।
कैसे अच्छाई की जीत बुराई पर होती।
कैसे धर्म की जीत अधर्म पर होती।।
मानव! तू दुःख से न डर। दुष्ट का स्वागत कर।।
उस पर खुशी के फूल बरसा। उसको दुआ दे लम्बे जीवन की।
ताकि वह अनेकों का कल्याण करे।।

एक अहसास

तेरे होने का अहसास मुझे होता है। जब दुःख मेरे पास होता है।
तू दूर मुझ से चला जाता है। जब सुख मेरे पास होता है।।
उस सुख से तो दुःख भला। जो तुझे मेरे पास ले आए।।
मुझे पल–पल तेरा अहसास कराए।।
डूबूँ तेरी करुणा में, हँसू तेरी कृपा पर।।
जानूँ तेरी दया को। बूझूँ तेरी मेहरबानी को।।
इस जमाने से तू लाख गुना अच्छा है।
क्योंकि तू दुःख में साथ निभाता है।।
ये दुनिया तो मतलबी है। सुख में वाह वाही करती है।।
दुःख में किनारा काटती है।।
अब तू ही बता कि मैं किसे चुनूँ?
दुःख को या सुख को?
तेरे होने का अहसास मुझे होता है। जब दुःख मेरे पास होता है।।
दुःख की सीढ़ी से मैं पहुँचू तेरे पास।
सुख की सीढ़ी से मैं पहुँचू जमाने के पास।।

जमाना जो सुख में पुचकारे, दुलारे।
जमाना जो दुःख में दुतकारे।।
लाँछन पे लाँछन लगाए जाते हैं।
दिन रात शब्दों के बाण साधे जाते हैं।
पर तेरा मुझे निरन्तर अहसास है।
लगता है कि कोई मेरा अपना मेरे पास है।।
तू तो मेरे अन्दर देख सकता है। मेरी सच्चाई को जान सकता है।।
मुझे अपनी अनन्त गोद में रखता है।
जब दुःख मेरे पास होता है। तेरे होने का अहसास मुझे होता है।
अब न लगता डर दुःख से ।अब न लगता डर जमाने से।।
क्योंकि तू सदा मेरे पास होता है। इसका पल–पल अहसास मुझे होता है।
मेरा भोला पन ही मेरा हथियार है।
क्योंकि हे श्याम सुन्दर, तुझे उसी की दरकार है।
मेरी सच्चाई ही मेरी शक्ति है।
क्योंकि हे श्याम सुन्दर वही तेरी सच्ची भक्ति है।

अपने भक्त को बचाना तेरा कौल है।
अपने भक्त का योगक्षेम वहन करना तेरा कौल है ।।
तेरे होने का मुझे अहसास है। जब दुःख मेरे पास है।।
न माँगू सुख के काँटे। माँगू दुःख की सेज।
क्योंकि उसपे मुझे तेरा साथ है।।
इस दुःख और सुख के झूले से निकाल ले।
हे श्याम सुन्दर अपनी अनन्त गोद में मुझे बिठाल ले।।
बना ले अपना प्यारा बालक। जिसके सिर पर सदा तेरा हाथ है।।
तेरे होने का मुझे अहसास है। जब दुःख मेरे पास है।।
किसको चाहूँ? किसको माँगू? जब तू मेरे पास है।
तू है पासबाँ मेरा, तू ही दिलरुबा मेरा।
जब तू मेरे पास है, मुझे न और किसी की दरकार है।
संसार के सहारे तो हैं झूठे, एक तेरा ही सहारा है सच्चा।
जो हर जन्म में मेरे साथ है।
तेरे होने का मुझे अहसास है। तेरे दर्शनों की मुझे प्यास है।।

मेरी प्रार्थना

हे गुरुदेव!मुझे शक्ति देना, भक्ति देना।
इस राह में गिरती रहूँ; उठती रहूँ, चलती रहूँ।
ठोकरों से न घबराऊँ। बाधाओं से न घबराऊँ।।
डर कर अपने कदम न पीछे उठाऊँ।
फौलाद सा मेरा संकल्प हो। तेरी आज्ञा ही मेरा धर्म हो।।
सारी दुनिया का सामना करने की शक्ति मुझे दो।
पहाड़ों को भी लाँघने की शक्ति मुझे दो।।
तुम्हारी शिक्षाओं को जन–जन में फैलाऊँ।
प्रत्येक मानव को एक दिव्य राह दिखाऊँ।।
ताकि वह अपने दिव्य स्वरूप को जान सके ।
ईश्वर की उस असीम सत्ता से जुड़ सके।।
अपने रोम–रोम में उस असीम सुख का अनुभव कर सके।

जिस पर उसका सहज अधिकार है।।
इसी धरा पर ईश्वर कृपा का साक्षात् अनुभव कर सके।
जिस पर उसका सहज अधिकार है।।
जीवन तो मिला है आनन्द के लिए।
जीवन तो मिला है निर्वाण के लिए।।
जीवन तो मिला है ईश्वर प्राप्ति के लिए ।
जीवन तो मिला है अनन्त सुख और शांति के लिए।।
इसी धरा पर स्वर्ग है। यह प्रत्येक मानव जान सके।।
प्रत्येक मानव के रूप में ईश्वर को देख सके।
नर को ही नारायण मान कर उसकी सेवा कर सके।।
पूरे विश्व को ही अपना परिवार बना सके।
विश्व बंधुत्व का सपना सच कर के दिखा सके।
भारत को विश्व सम्राट बना सके।।

अपने गुरु के श्री चरणों में एक श्रद्धांजली

गुरु आए मेरे जीवन में, कुछ ऐसा ले कर।
जो पहले मेरे जीवन में नहीं था।।
मेरे जीवन में धन था पर सुख नहीं,
मेरे जीवन में सुख उपभोग के सब साधन थे, पर आन्तरिक प्रसन्नता नहीं थी।
भोगों के बीच रहते हुए, उनको भोगते हुए भी,
सुख की गहराई नहीं थी।
प्रसन्नता की निरन्तरता नहीं थी। सतत शांति नहीं थी।।
सुख और दुःख के झूले में, मैं सदा झूलती।
अक्सर स्वयं से पूछती, मेरे इस जीवन का क्या अर्थ है?
क्या खाना, पीना और मर जाना ही मेरी नियति है?
क्या मैं इस पशुवत् जीवन के लिए ही इस धरा पर आई थी?
क्या ईश्वर ने यह सृष्टि केवल भोग विलास के लिए ही रची है?
गुरु जी के सन्यासी रूप को देखती

तो मन में प्रश्न अक्सर उठता।
ऐसा क्या है आखिर इस चोले में,
जो इन्होंने इतनी बड़ी जमींदारी ठुकरा दी?
ऐसा क्या है आखिर इस जीवन में,
जो स्वामी शिवानन्द ने अपनी डॉक्टरी छोड़ दी?
ऐसे अनेकों प्रश्न मुझे दिन रात परेशान करते,
मेरे जेहन को मथते।
जब अपने अनुभव से उस अनन्त सुख की एक झलक पाई।
तब समझी कि क्यों गुरु जी ने धन दौलत का त्याग किया।।
जब अपने अनुभव से ये जाना कि ये एक गहरा सागर है।
इसमें जितना डूबती हूँ, उतना अधिक प्राप्त करती हूँ।।
तब मैं समझी जो मजा फकीरी में है, वो अमीरी में नहीं।
तब मैं समझी जो मजा प्रभु सिमरन में है,
वो संसार के किसी विषय भोग में नहीं।
तब मैं समझी जो मजा निःस्वार्थ सेवा में है,
वो मजा सेवा करवाने में नहीं।।
जो आनन्द दूसरे को सुख देने से मिलता है।

वो आनन्द स्वार्थ में कहाँ?
जो आनन्द दूसरे को मुस्कान देने से मिलता है।
वो आनन्द अपने खिलखिलाने में कहाँ?
अपने अनुभवों की पोटली को अपनी गाँठ में बाँधे फिरती,
कैसे बाँटू? किसे सुनाऊँ? किसे सिखाऊँ?
किसे समझाऊँ? दिन रात तड़पती,
जब लोगों को व्यर्थ में ही रोगों से जूझते देखती।
और तब गुरु कृपा से,
गुरु अनुकम्पा से मुझे, लेखन का सौभाग्य मिला।
मेरे लेखों को अनेकों ने ठुकराया, अनेकों ने पसन्द किया।।
गुरु के पसन्द करने से, गुरु के उत्साह वर्धन से
मैं हुई मालामाल! मेरा जीवन बना दिव्य!
ऐसे गुरुओं के श्री चरणों में मेरा कोटिशः प्रणाम।

एक भाव

हे गुरुदेव –
तुम क्या हो? तुम कौन हो?
हम गिरते हैं, तुम उठाते हो।

हम रूठते हैं। तुम मनाते हो।।
हम गल्तियाँ करते हैं? तुम ठीक करवाते हो।
अपने धैर्य से हमें धैर्य सिखाते हो।
इस अनन्त के तुम हो एक बिन्दू, हम भी अनन्त हैं, ये तुम बताते हो।
कौन भलाऐसा होगा, जो अपने से कम को अपने जैसा कहेगा?
हम तो जरा सा भी पाते हैं, अभिमान करते हैं।
दिन रात गर्व से फूले रहते हैं, और दूसरों को नीचा समझते हैं।
तुम आते हो, हमें हमारी असलियत बताते हो और अपने पास बिठाते हो।
एक माँ की तरह, हमारी सफाई करते हो।
अवगुणों की धूल झाड़ते हो।।
इस कलयुग में केवल और केवल तुम्हारा ही सहारा है।
कोई एक तो ऐसा है, जिसे मैं दिलो जान से प्यारी हूँ, ये अहसास तुम मुझे पल–पल दिलाते हो।
मैं जो हूँ, जैसी हूँ, तुम स्वीकार करते हो मेरा अस्तित्त्व वैसे ही।
केवल और केवल मेरे अस्तित्त्व को ही सजाना, सँवारना और

निखारना चाहते हो।
मेरी प्रगति देख कर ही तुम प्रसन्न होते हो।
क्योंकि तुम सच्चे दिल से मेरे अन्दर छिपे ईश्वरत्त्व को उभारना चाहते हो।।
अब कैसे न मैं नत मस्तक होऊँ, तुम्हारे सामने।
तुम कुछ कहते नहीं, माँगते नहीं, अपेक्षा करते नहीं।
ये सिर स्वयं ही झुकता है तुम्हारे सामने।

मेरे गुरु का सपना

"योग का संदेश घर–घर पहुँचाना है, ज्ञान की ज्योति जगाना है।"–परमहंस श्री स्वामी सत्यानंद सरस्वती

आज पूरा विश्व संताप और विषयों की अग्नि में जल रहा है। पाश्चात्य सभ्यता की आँधी पूरे समाज को दावानल की तरह जला रही है, भस्म कर रही है। आज की युवा पीढ़ी पश्चिम के बाहरी आवरण, चकाचौंध से मानो अंधी हो गई है। बहुत ही भंयकर स्थिति का सामना पूरा विश्व कर रहा है। बच्चे, युवा,

प्रौढ़ केवल और केवल पैसे को ही अपना ईमान बना लिए हैं। पैसा, पैसा और केवल पैसा– यही आज के मानव का जीवन ध्येय बन गया है। स्वयं को भी भूल कर, इंसानियत को ताक पर रख कर, आज का मानव दुःख और शोक के सागर में डूबता चला जा रहा है। अनेक शारीरिक और मानसिक व्याधियाँ उसका भाग्य बन गई हैं। और बड़े दुःख की बात है कि नैतिक मूल्यों का पतन दिन पर दिन बढ़ता जा रहा है।

यहाँ तक कि युवा, प्रौढ़ और वृद्ध लोग भी इस रोग से ग्रस्त हो रहे हैं। विज्ञान की प्रगति मानव को ऊँचाई के कगार पर न ले जा कर क्रोध, ईर्ष्या, तनाव के गर्त में गिरा रही है। मानव स्वयं इस पतन के लिए उत्तरदायी है। अग्नि से भोजन पकाया जाता है और वह आग किसी का घर भी जला देती है। भारतीय संस्कृति की गरिमा को जगाने, उठाने और आगे बढ़ाने की आवश्यकता है। नैतिक मूल्यों को भारतीय संस्कृति में प्रथम

स्थान दिया गया है। योग, भारत की विश्व को महत्वपूर्ण सौगात है। और हम भारतीय ! उसको पूर्णतया भुला कर, अपना मानसिक संतुलन खो रहे हैं। भारतीय सभ्यता में छोटों को प्यार, बड़ों का सम्मान, सच्चाई, ईमानदारी, अनुशासन जैसे मूल्यों का बीज बच्चों में इतनी गहराई से बोया जाता है कि कहीं न कहीं वे अपनी अच्छाई (अन्दर की) से जुड़े रहना चाहते हैं। यही ईश्वरीय गुण प्रसन्नता, शांति, संतोष जैसे मूल्यों का आधार बनते हैं। योग आज के युग की आवश्यकता है। योग के तीनों पक्ष शारीरिक जिसमें आसन मुख्यतः आते हैं, मानसिक जिसमें विभिन्न प्राणायाम आते हैं और भावनात्मक, जिसमें ध्यान, प्रत्याहार आता है, जो धीरे–धीरे मानव को उच्चता के शिखर पर ले जा सकता है। एक नीरोगी काया में ही स्वस्थ मन का निवास होता है और भावनात्मक संतुलन बनाए बिना स्वयं का विकास असंभव है।

योग के नियमित अभ्यास से जब धीरे–धीरे शरीर, मन और भावनाओं का तालमेल एक संतुलित व्यक्तित्व के रूप में प्रकट होता है तब वह व्यक्ति खुद भी प्रगति करता है और एक मजबूत स्तंभ की तरह बहुत से निर्बल लोगों को आशा की ज्योति दिखा कर सहारा देता है। केवल आवश्यकता है स्वयं को जगाने की और अपने सुन्दर भविष्य का निर्माण करने के लिए जागरूक होने की। योग एक स्वस्थ और सुंदर समाज की नीव डालने के लिए आज के युग का केवल और केवल एक ही विकल्प है। तो आओ ! योग की अलख घर–घर जलाएँ और मानवता का भविष्य उज्जवल बनाएँ। यही ईश्वर की सबसे ऊँची आराधना है।